॥ श्रीराधासर्वेश्वरो विजयते ॥

॥ श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः ॥

श्रीपरशुरामदेवाचार्यचरितम्
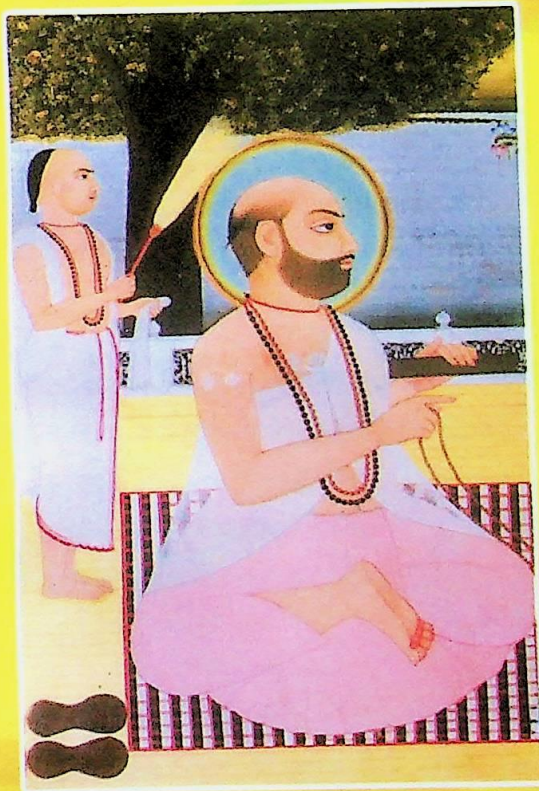
भाषानुवाद

पं. गोविन्ददास 'सन्त'

* श्रीसर्वेश्वरो जयति *

॥ श्रीभगवन्निम्बार्काचार्याय नमः ॥

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर

श्रीमन्नारणदेवाचार्यसंकलितं

श्रीपरशुरामदेवाचार्यचरितम्

(हिन्दीभाषानुवादसहितम्)

तदिदं--

अनन्तश्रीविभूषितजगद्गुरुश्रीमन्निम्बार्कपादपीठाधीश्वर 'श्रीजी'
श्रीबालकृष्णशरणदेवाचार्यचरणकमलाश्रितेन जयपुर-
मण्डलान्तर्गत-बधालग्रामवासिना पण्डित

श्रीगोविन्ददास-'सन्त'

धर्मशास्त्रि-पुराणतीर्थेन सम्पादितमनूदितञ्च

प्रकाशक--

अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यचार्यपीठ

निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद) किशनगढ, जि० अजमेर (राज०)

प्रथमावृत्ति वि० सं० २०१९ आषाढ शुक्ल २

पुस्तक प्राप्ति स्थान--

अखिल भारतीय श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ

निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद)

द्वितीयावृत्ति २०००

श्रीवसन्तोत्सव

वि० सं० २०६६ श्रीनिम्बार्काब्द ५१०६

मुद्रक--

श्रीनिम्बार्क - मुद्रणालय

निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद)

न्यौछावर

पाँच रुपये

निवेदन

यह 'श्रीपरशुरामदेवाचार्यचरितम्' नामक प्रस्तुत-पुस्तक जगद्गुरु श्रीमन्नारायणशरणदेवाचार्यजी महाराज द्वारा सकलित 'श्रीआचार्यचरित्र' का १४ वां विश्राम है, जो कि इसी पुस्तक के इत्याचार्यचरित्रस्य विश्रमोऽयं चतुर्दशः, इस ४६ वें श्लोक के भावार्थ से ज्ञात होता है।

अ० भा० श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ के प्रबन्धाधिकारी श्री वियोगीविश्वेश्वरजी महाराज को अपने भ्रमणकाल में यह पुस्तक हस्तलिखित रूप में महान्त श्रीईश्वरीशरणदेवजी महाराज महोतरा (मध्यप्रदेश) के यहाँ से प्राप्त हुई थी। श्रीप्रबन्धाधिकारीजी ने मेरे द्वारा इसका भाषानुवाद करवाकर पुनश्च अधिकारी श्रीव्रजवल्लभ-शरणजी महाराज वेदान्ताचार्य पंचतीर्थ श्रीनिकुञ्ज वृन्दावन द्वारा इसका हस्तलिखित श्रीआचार्य चरित्र से मिलान एवं संशोधन भी करवा दिया है।

खेद का विषय है कि प्रकाशित श्रीआचार्य चरित्र में यह १४ वां विश्राम (श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी का चरित्र) क्यों नहीं छपा, न जाने किस कारण वश छूट गया । अस्तु।

अतः इसी अभाव की पूर्ति कर भावुक भक्तजनों के लाभार्थ प्रकाशित करवा दिया है।

निवेदक--

गोविन्ददास 'सन्त'

भूमिका

अनन्त श्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधिपति यतिपति दिनेश्वर श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज एक महान् सिद्ध आचार्य हुए हैं। आपने खंडेला-ठीकरिया (राजस्थान) में गौड़ ब्राह्मण कुल को अलंकृत किया था और रसिक राजराजेश्वर श्रीहरि-व्यासदेवाचार्यजी महाराज के आप विशेष कृपापात्र शिष्य थे। उन्हीं का शुभाशीर्वाद प्राप्त करके आप मथुरा से पुष्कर क्षेत्र में पधारे थे। और यवन तान्त्रिकों को परास्त करके हिन्दु धर्म की रक्षा की थी। उनके सम्बन्ध में श्रीनाभाजी ने लिखा है कि-जैसे एक चन्दन का पेड़ समस्त वन को सुगन्धित कर देता है उसी प्रकार श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी ने जंगली देश के निवासियों को अपने उपदेशों एवं आचरणों द्वारा भगवत् पार्षद बना दिया। (भक्तमाल छ० सं० १३७)

आपकी अनुभूतियों की झलक उनकी रचनाओं में मिलती है जो परशुराम सागर के नाम से प्रसिद्ध है। वह राजस्थानी मिश्रित व्रज भाषा के विविध छन्द और पदों का एक सुन्दर उपादेय ग्रन्थ है उसका एक अंश (दोहे मात्र) स्थल उदयपुर से ही कुछ वर्ष पूर्व प्रकाशित हुआ था। अवशिष्ट बहुत सा भाग अभी अप्रकाशित ही है। उस ग्रन्थ की एक प्रति वि० सं० १६७७ में हुई थी, वह आचार्यश्री के लीला विस्तार के पश्चात् ही हुई होगी, ऐसा अनुमान वि० सं० १६६८ के एक पट्टे से भी पुष्ट होता है। कुछ आलोचकों

विद्वानों ने भी ''सूरपूर्व वृजभाषा के काव्यों में श्रीपरशुराम सागर की गणना की है। कुछ और भी ऐसे हेतु हैं जिससे कि वे सूर तुलसी जैसे प्रसिद्ध भक्त कवियों के सम सामयिक होते हुए भी उनसे पूर्वोद्भूत सिद्ध होते हैं। कुछ ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर वि० सं० पन्द्रह सौ से सोलह सौ अड़सठ तक उनकी विद्यमानता प्रमाणित होती है। सदाचार सिद्ध सन्तों का दीर्घजीवी होना स्वाभाविक ही है।

ऐसी प्रसिद्ध जन श्रुति है कि उन्होंने श्रीपुष्करराज में जीवित समाधि ली थी। उस समय पुष्कर के अतिरिक्त श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ (सलेमाबाद) और श्रीवृन्दावन में भी भावुक जनों को उनके साक्षात् दर्शन हुए थे। अब भी कभी कभी श्रद्धालु भक्तों को झाँकी मिल जाती है। आपकी धूनी (हवन कुण्ड) की भस्म और नालाजी के जल से आज तक न जाने कितने ही श्रद्धालु भक्तों ने अपने अभीष्ट पूर्ण कर लिये हैं। इसका अनुभव तो आज भी दर्शन को प्रत्यक्ष हो रहा है।

ऐसे महापुरुषों की उपदेश प्रद विस्तृत जीवनी का प्रकाशित होना परम आवश्यक है। प्रस्तुत पुस्तक में उनकी जीवनी के कुछ अंशों की झलक है। विस्तृत आचार्य चरित्र (संस्कृत ग्रन्थ) से उद्धृत करके एवं उसका हिन्दी अनुवाद करके श्रीसन्तजी ने भावुक जनों का बड़ा उपकार किया है।

--श्रीव्रजवल्लभशरण वेदान्ताचार्य

पंचतीर्थ, प्रधान सम्पादक

श्रीसर्वेश्वर मासिक पत्र, श्रीनिकुंज, वृन्दावन

❁ वन्दना ❁

नमः कृष्णाय हंसाय, निम्बार्कायानिरुद्धतः ।
आचार्य्याय चतुर्व्यूह, परम्पराप्रवर्त्तिने ।।१ ।।
निम्बादित्यस्वरूपाय हरिव्यासस्वरूपिणे ।
श्रीमत्परशुदेवाय नमस्ते परमात्मने ।।२ ।।
वृन्दावननिवासाय नमः षोड़शनामिने ।
नित्याय सत्यरूपाय भक्त-भूपाय ते नमः ।।३ ।।
वेद-वेदान्तपाराय ताराय युग्मरूपिणे ।
श्रीमत्परशुदेवाय गुरवे विभवे नमः ।।४ ।।
अनन्ताय नमस्तुभ्यं परमानन्ददायिने ।
श्रीमत्परशुदेवार्य सर्वाचार्य्य-स्वरूपिणे ।।५ ।।
नमः कुमाररूपाय देवर्षिरूपिणे नमः ।
पार्षदाय नमस्तस्मै योगेशाय नमो नमः ।।६ ।।
षट्लोकीमिमांदिव्यां यः पठेत्साधुसत्तमः ।
तस्य वृन्दावने वासो भवत्यत्र न संशयः ।।७ ।।

रचना काल- --श्रीतत्ववेत्ताचार्यः
वि. सं. १५६६

श्रीपरशुरामदेवाचार्यचरितम्

(हिन्दीभाषानुवादसहितम्)

अतः परं प्रवक्ष्यामि चरितं परमाद्भुतम् ।
(श्री) परशुरामदेवस्य ज्ञान-भक्तिविवर्द्धनम् ।।१।।

इसके अनन्तर परमाद्भुत भक्ति ज्ञानवर्धक श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज का चरित्र वर्णन करूँगा।

भाद्रे कृष्णे च पञ्चम्यामवतीर्णः स्वयं प्रभुः ।
(श्री) परशुराम देवाख्यो ज्ञान-भक्तिप्रतर्तकः ।।२।।

जन साधारण में भक्ति और ज्ञान का विस्तार करने वाले विशिष्ट शक्ति सम्पन्न श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज का अविर्भाव भाद्रपद कृष्णपंचमी को हुआ था।

यः संजहारपदकंजमधुव्रतानां
कामादिहैहयकुलं निजबोधबाणैः ।
वन्दे च तं परशुराममहं द्वितीयं
विद्याविरागपरमं कृपयावतीर्णम् ।।३।।

जिस प्रकार जमदग्नि पुत्र श्रीपरशुराम ने अपने परशु आदि अस्त्र-शस्त्र और बाणों से मदान्ध तथा प्राणियों को सताने वाले हैहय वंश के राजा सहस्त्रार्जुनादि का संहार किया था, उसी प्रकार अपने तत्त्वज्ञान रूपी बाण से शरणागत भक्तों की कामादि (सांसारिक) वासनाओं को नष्ट करने वाले ब्रह्मविद्या तथा वैराग्य से युक्त एवं सांसारिक जीवों पर कृपा करने के लिए भूतल पर

अवतीर्ण होने वाले शान्त सात्विक स्वरूप अपर (द्वितीय) श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज को मैं प्रणाम करता हूँ।

यवनेशं विनिर्जित्य भक्तिज्ञानबलेन च।
स्वधर्मं स्थापयामास मरुदेशे सनातनम् ।।४ ।।

भगवान् श्रीराधाकृष्ण के चरणारविन्द की भक्ति तथा अध्यात्मिक बल से मुसलमानों के प्रसिद्ध फकीर को जीतकर यवन समय के प्रभाव से लुप्त होते हुए सनातन (वैष्णव) धर्म को जिन्होंने मरुस्थल (मारवाड़ प्रदेश) में स्थापित किया एवं सुदृढ बनाया।

एकदा श्रीहरिव्यासदेवाचार्यः प्रसन्नधीः।
शिष्येषु प्रवरान्मत्वा द्वादशानाह धर्मवित् ।।५ ।।

एक समय धर्म के तत्त्व को भली प्रकार जानने वाले एवं प्रसन्न मन वाले श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी ने अपने शिष्य समुदाय में श्रेष्ठ बारह शिष्यों को, जिन्हें कि वे सुयोग्य समझते थे अपने समीप बुलाकर उपदेश देने लगे।

श्रीमत्सर्वेश्वरं देवमस्माकं कुलदैवतम् ।
नारदादि-सुरर्षिभिः संसेव्यं निजदेशिकैः ।।६ ।।

देवर्षि श्रीनारदमुनि को आदि लेकर जितने भी श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय के आचार्य हुये हैं, उन सबों के सेवित और हमारे कुल देव स्वरूप जो ये श्रीसर्वेश्वर भगवान् हैं--

पूर्वाचार्योक्तरीत्या वै तत्सेवां कः करिष्यति।
एकाग्रमनसा सर्वे ब्रूयुर्धर्मपरायणाः ।।७ ।।

उनकी सेवा श्रीनारदादि पूर्वाचार्यों के नियमानुसार कौन

करेगा ? इस प्रकार श्रीगुरुदेव की आज्ञा सुनकर धार्मिक भावना से

ओतप्रोत उपर्युक्त सभी वे शिष्यगण स्वतन्त्रता पूर्वक अपने-अपने विचार महाराजश्री से निवेदन करने लगे।

श्रुत्वाचार्यवचः सर्वे तूष्णीभूता व्यचारयन् ।
ऊचुस्तेऽयं कृपापात्रः सेवामेष करिष्यति ।।८।।

प्रथम तो वे आचार्यश्री का महत्वपूर्ण प्रश्न सुनकर सब चुप हो गये फिर विचार कर कहने लगे कि भगवन् ये श्रीपरशुरामदेव जी आपके विशेष कृपापात्र हैं। अतः ये ही महानुभाव श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा कर सकेंगे।

श्रुत्वाचार्यस्तमाहूय श्रीमत्सर्वेश्वरं हरिम् ।
अर्पयामास शिरसि परशुरामाभिधस्य वै ।।६।।

इस प्रकार सर्वसम्मत शिष्यों की वाणी सुनकर और श्रीपरशुरामदेवजी को बुलाकर श्रीसर्वेश्वर भगवान् की सेवा का भार उनको ही सौंप दिया।

लब्धा सर्वेश्वरं देवं स चचार महीतले ।
धर्मसंस्थापयन्नूर्व्यामाचार्यशिक्षणं परम् ।।१०।।

इस प्रकार आचार्य शिरोमणि श्रीहरिव्यासदेवजी महाराज की कृपा से श्रीसर्वेश्वर भगवान् की सेवा प्राप्त कर पूर्वाचार्यों की शिक्षा जो कि कलिकाल के प्रभाव से छिन्न-भिन्न हो रही थी उसको पूर्वरूप में स्थापित करते हुये एवं भूतल को धर्ममय बनाते हुये श्रीपरशुरामदेवजी महाराज संसार में भ्रमण करने लगे।

कदाचिच्च मरौ देशे दृष्ट्वा पातकिनो जनान् ।
देशं म्लेच्छासक्तं पश्यंस्तदधीशं महामनाः ।।११।।

बुद्धिवैभवशाली श्रीपरशुरामदेवजी महाराज इस प्रकार भ्रमण करते हुये मारवाड़ प्रदेश में पहुँचे जहाँ पर पापपङ्क (पाप रूपी कीचड़) में लिप्त और मुसलिम संस्कृति से संस्कृत एवं प्रभावित राजा तथा प्रजा को देखकर उनका मन अत्यन्त प्रभावित हुआ। इन सारी परिस्थितियों को समूल नष्ट करने के लिये मस्तिंगशाह नामक प्रसिद्ध मुसलमान फकीर (जिसका प्रभाव सारे प्रदेश पर पड़ रहा था) के ऊपर अपना प्रभाव डालने के लिये एक लीला रची।

यवनेशे क्वचिद्याते तत्प्रात्राणि विनाशयन्।
अग्नेः शान्तिं विधायाथ जगाम तद्वनान्तरम् ।।१२।।

किसी कारण वश मुसलमान फकीर के बाहर चले जाने पर श्रीपरशुरामदेवजी महाराज ने उसके बर्तन तोड़-फोड़ डाले और उसके यहाँ की आग को बुझाकर पास के ही दूसरे जंगल में चले गये।

स्थानाधीशोऽतितेतेजस्वी देशाधीशेन सेवितः।
यवनेन शर्मवादे ग्रामे संस्थापितः स्वयम्।।१३।।

वह फकीर भी कोई साधारण फकीर नहीं था। अत्यन्त प्रभावशाली और तात्कालिक बादशाह का गुरु था। मुसलमान बादशाह ने स्वयं उसको शर्मबाद (आधुनिक सलेमाबाद) नामक ग्राम के स्थान पर जहाँ कि घोर जंगल था, आश्रम बनवाकर रक्खा था।

दृष्ट्वा स स्वाश्रमं भ्रष्टं चुकोप केन वै कृतम्।

मत्तोऽन्यः कः पुमानद्य सर्वशास्त्रविशारदः।।१४।।

अपने आश्रम (स्थान) को इस प्रकार नष्ट भ्रष्ट देखकर वह फकीर क्रोधित होकर कहने लगा कि मुझसे भी बढकर तन्त्रविद्या निपुण और कौन है, जिसने मेरे आश्रम को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया है।

अद्य तं भस्मसात्कुर्वे येन मेऽपकृतोऽधुना।
इत्युक्त्वा चासुरीं मायां यावद्बुद्धिबलोदयाम्।।१५।।

जिसने इस प्रकार मेरा अपमान और हानि की है, उसको आज ही मैं भस्म कर दूँगा। ऐसा कहकर उसने अपनी बल-बुद्धि के अनुसार आसुरी माया को--

स्वेष्टं च प्रेषयामास प्रतीपं हन्तुकाम्यया।
द्वितीयेऽह्नि पुनस्तत्रागत्य पात्राणि ध्वंसयत्।।१६।।

अपने इष्टदेव की पूरी शक्ति द्वारा अपने शत्रु स्वरूप श्रीपरशुरामदेवजी के मारने के लिए भेजा, किन्तु उसकी वह आसुरी माया महाराजश्री का कुछ भी बिगाड़ नहीं कर सकी, परन्तु इसके विपरीत परिणाम वाली बनकर दूसरे दिन उसके ही आश्रम आकर उसके बर्तनों को तोड़-फोड़ आश्रम को नष्ट-भ्रष्ट कर डाला।

स्थानाधीशः पुनर्दृष्ट्वा मत्वा चात्मबलं वृथा।
शर्मवादं परित्यज्य ह्याचार्यशरणं गतः।।१७।।

वह फकीर इस भाँति स्थानीय उपद्रव की शान्ति करने में अपनी शक्ति को असमर्थ समझकर शर्मवाद (वर्तमान सलेमाबाद) के स्थान पर जंगल में बने हुए अपने आश्रम को छोड़कर जिस स्थान (नाग पर्वत की गुफा) में श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज निवास करते थे, वहाँ उनकी शरण में पहुँचा।

पादमूले प्रणम्याथ जगाम पश्चिमां दिशम्।
श्रीपर्शुरामदेवोऽपि तत्र वासमचीकमत्।।१८।।

महाराजश्री से क्षमा मांगकर और प्रणाम कर वह फकीर पश्चिम दिशा की ओर चला गया। श्रीपरशुरामदेवजी ने भी विचार किया कि अब इस क्षेत्र में ही निवास करके वैष्णव धर्म का प्रसार करना आवश्यक है।

धर्मं संस्थापयामास वैष्णवं साधुसेवितम्।
आचार्याणामेषधर्मः श्रीसर्वेश्वरसेवनम्।।१९।।

वहाँ पर निवास करते हुए श्रीपरशुरामदेवजी ने श्रेष्ठ पुरुषों द्वारा सम्मत सनातन वैष्णव धर्म का प्रचार-प्रसार किया। कारण कि जनता में श्रीसर्वेश्वर प्रभु की सेवा-पूजा (भक्ति) का प्रचार करना ही आचार्यों का परम्परागत धर्म है।

कश्चिद् ब्रह्मकुले जातो भगवद्धर्मकाम्यया।
त्यक्त्वा गृहं कुटुम्बञ्च गुरोराज्ञानुवर्तकः।।२०।।

कुछ समय के पश्चात् कोई एक ब्राह्मण कुमार ने गृह तथा कुटुम्बादि के मोह को छोड़ कर गुरुसेवा परायण बन वैष्णव धर्म प्राप्ति की अभिलाषा की।

भगवत्तत्वजिज्ञासु गुरोः शरणमागतः।
गुरुणा तच्छिखासूत्रं त्याजयित्वाऽऽत्मसात्कृतः।।२१।।

और भगवत्तत्त्व के यथार्थ जिज्ञासु उस ब्राह्मण कुमार ने किसी एक गुरुदेव की शरण ली। गुरु महाराज ने भी उसके शिखा सूत्र (चोटी और यज्ञोपवीत) का परित्याग करवा करके सन्यास धर्म की दीक्षा देकर उसको सन्यासी बना लिया।

उवास स चिरं तत्र ज्ञात्वा शास्त्रविधिं परम्।
त्यक्त्वा गुरुं शरणाय पर्शुराममुपागतः ।।२२ ।।

वह ब्राह्मण बालक बहुत दिन पर्यन्त उनके आश्रम में रहा एवं भली प्रकार सच्छास्त्रों का ज्ञान भी प्राप्त किया, किन्तु उस नीरस ज्ञान से आत्म तुष्टि न होने के कारण गुरु की शरण छोड़ कर अपने समय के प्रसिद्ध आचार्यप्रवर श्रीपरशुरामदेवजी महाराज की शरण में आया।

पर्शुरामोऽपि तं ज्ञात्वा शुद्धं भक्तिपरायणम्।
संस्कारपंचकं कृत्वा परं तत्त्वमुपादिशत् ।।२३ ।।

श्रीपरशुरामदेवजी ने भी उस ब्राह्मण पुत्र को शुद्ध और भगवत्तत्त्वाभिलाषी जानकर वैष्णव धर्मानुसार कण्ठी तिलक आदि पांचों संस्कारों से दीक्षित कर परम तत्त्व स्वरूप श्रीकृष्ण और उनकी पराभक्ति तत्त्व का उपदेश किया।

उवाच भगवांस्त्वं वै तत्त्ववेत्ता भविष्यसि।
भक्तिमार्गं मरुप्रान्ते वर्तयस्व ममाज्ञया ।।२४ ।।

श्रीपरशुरामदेवजी महाराज अपने समीप आये हुए उस नूतन शिष्य से कहने लगे कि तुमने भगवत्तत्त्व का ज्ञान प्राप्त कर लिया है, अतः तुम्हारा नाम आज से संसार में "तत्ववेत्ता" होगा। अब मेरी आज्ञा से इस मरुस्थल प्रदेश में तुम भागवद्-भक्ति का प्रचार-प्रसार करो।

सोऽपि श्रुत्वाचार्यवाक्यं यथोक्तं तत्तथाकरोत्।
तत्त्ववेत्ता इतिख्यातः शास्त्रतत्त्वविवेचकः ।।२५ ।।

शास्त्र और भगवत्तत्त्व की विवेचना मे निपुण तथा तत्ववेत्ता

नाम से विख्यात उस ब्राह्मण बालक ने आचार्यश्री की वाणी को सुनकर उनकी आज्ञानुसार ही सारे मारवाड़ प्रदेश में भक्ति तत्त्व का प्रचार-प्रसार किया।

(एक बार श्रीतत्ववेत्ताजी का उन निर्गुणी सन्यासीजी से मिलना हुआ। तब उन्होंने इनके भेष और सिद्धान्त में परिवर्तन देख इनको गुरु दीक्षा की परीक्षा के हेतु जल से भरा हुआ एक घड़ा देकर श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी के पास भेजा)

गुरुणा प्रेषितं कुम्भं जलपूर्णञ्च तं पुनः।
रसपूर्णं विधायाग्रे प्रेषितं तत्समीपतः ।।२६ ।।

श्रीमहाराज ने पूर्व गुरु (सन्यासीजी) के द्वारा परीक्षार्थ भेजे हुए उस जल के घड़े में शक्कर एवं बतासे मिलाकर मीठा करके पुनः उन्हीं के पास वापिस भेज दिया।

दृष्ट्वा गुरुभरं कुम्भं तथा स्वादुतरं पुनः।
आश्चर्यमतुलं लेभे आचार्यं समपूजयत् ।।२७ ।।

उन पूर्व गुरु ने भी सुस्वादु जल से भरे हुए घड़े को देख कर अत्यन्त आश्चर्य माना और श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज के पास आकर उनकी सेवा पूजा और बहुप्रकार से आदर सम्मान किया।

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।
ऊर्ध्वपुण्ड्रञ्च मालां च तत्रत्येषु प्रवर्तयन् ।।२८ ।।

श्रीपरशुरामदेवजी के साथ रहने वाले वैष्ण- जनों का तो भगवान् श्रीविष्णु का स्मरण, कीर्तन, पूजापाठ अ।र ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक एवं कण्ठी माला धारण का प्रचार करना यह अहर्निश

(प्रतिदिन रात) का नियम था।

श्रवणाद्दर्शनाद्ध्यानात्तत्पादसेवनादपि ।
तद्देशस्थाः जनाः सर्वे विष्णुपार्षदतां गताः ।।२९।।

साधु सन्तों द्वारा कही जाने वाली भगवान् श्रीकृष्ण की कथा के श्रवण से, ध्यान से, भगवान् की सेवा-पूजा करने से वे साधुवर्ग ही भगवद्भक्तिमय नहीं हो रहे थे किन्तु तद्देशीय जनता भी उन लोगों के संसर्ग से साक्षात् विष्णु पार्षद स्वरूप हो रही थी।

यथा चन्दनसंसर्गादन्ये वृक्षाः समीपगाः ।
चन्दनत्वं समायान्ति तथा तत्सेवनाज्जनाः ।।३०।।

जैसे चन्दन के सम्पर्क में आने वाला प्रत्येक वृक्ष चन्दनमय हो जाता है, उसी प्रकार श्रीपरशुरामदेवजी के संसर्ग में आने वाला प्रत्येक व्यक्ति श्रीविष्णु भक्त (वैष्णव) बन जाता था।

बहुकालार्जितं ध्वान्तं ज्योतिषा नश्यति ध्रुवम् ।
जन्मान्तरीयमज्ञानं तथा तेषां हृतं क्षणात् ।।३१।।

जिस प्रकार बहुत काल से एकत्र हुआ अन्धकार सूर्य की किरणों से नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज की शरण में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति का जन्म जन्मान्तर समुपार्जित अज्ञानान्धकार नष्ट हो जाता था।

कदाचित्केनचित्क्वापि श्रुतमाचार्यभाषितम् ।
वाक्यं वेदान्तसिद्धान्तसारं गुर्वर्थगह्वरम् ।।३२।।

किसी समय कहीं पर किसी एक व्यक्ति ने श्रेष्ठ अर्थों से युक्त और वेदान्त वाक्यों से परिपूर्ण श्रीपरशुरामदेवजी महाराज की परम दिव्योपदेशमयी इस वाणी को सुनी। जो कि इस प्रकार से

थी।

ममास्येदं परित्यज्य अहंकारप्रदं तथा।
सर्वं ब्रह्मात्मकं पश्यन्न विभेति कथंचन ।।३३।।

अहंकार को उत्पन्न करने वाली 'यह मेरी' 'और यह तेरी' इस भावना को छोड़कर जो व्यक्ति सम्पूर्ण चराचर विश्व को भगवद्विभूतिमय देखता है, उसको कहीं पर किसी भी वस्तु से भय नहीं होता है।

यद्यत्प्रियतमं लोके दारागार-धनादिकम्।
अनाद्यविद्यायुक्तस्य जीवस्य बन्धनात्मकम् ।।३४।।

इस परिवर्तनशील संसार में स्त्री, घर और धन आदि जितने भी मायिक पदार्थ हैं, वे सब अनादि अविद्या से युक्त जीव के लिए बन्धन के ही कारण हैं।

तस्मात्सर्वं परित्यज्य मनः प्रीतिकरं चलम्।
राधासर्वेश्वरे कृष्णे ह्यचलं धारयेन्मनः ।।३५।।

इसलिए इन समस्त नश्वर पदार्थों को छोड़कर भगवान् श्रीराधासर्वेश्वर श्रीकृष्णचन्द्र के चरणारविन्दों में मन को निश्चल करके लगाना चाहिए। अर्थात् भगवद्भजन ही सर्वश्रेष्ठ है।

इत्याचार्यवचः श्रुत्वा कोऽपि तत्त्वपरीक्षकः।
आगत्याह भवान् कस्मादैश्वर्यनिरतोऽभवत् ।।३६।।

इस प्रकार आचार्यश्री के उपर्युक्त वचन सुनकर कोई एक तत्त्व जिज्ञासु महाराजश्री की परीक्षा लेने के लिए उनके सामने आकर बोल उठा कि--भगवन् ! फिर आप इतने ऐश्वर्य को लेकर

क्यों चलते हैं, अर्थात् आपके साथ भी तो ये हाथी घोड़े छड़ी

चँवर और छत्र आदि सब कुछ हैं ?

तच्छ्रुत्वा श्रीपरशुरामोऽगमन्नागेश्वरं गिरिम्।
सर्वं परिच्छदं त्यक्त्वा गुहायां प्रविवेशह।।३७।।

श्रीपरशुरामदेवजी भी इस वाणी को सुनकर अपने सारे ठाठ बाट को वहीं पर छोड़कर श्रीपुष्कर क्षेत्र के सुविख्यात नाग पहाड़ पर जाकर एक गुफा में विराजमान होगये।

परीक्षकेण सार्द्धं हि हरेर्ध्यानपरोऽभवत्।
तत्रापि ह्यागतो दैवाद्धनिकः कोऽपि धार्मिकः।।३८।।

वहाँ पर आप उसी परीक्षक के साथ भगवान् श्रीसर्वेश्वर के ध्यान में संलग्न होगये। भगवत्कृपा से वहाँ पर भी कोई एक धार्मिक एवं धनी व्यक्ति आ ही पहुँचा।

अभ्यागतं प्रचक्षाणो दृष्ट्वाचार्यं भयापहम्।
पपात पादयोः प्रेम्णा तस्मै सर्वं न्यवेदयत्।।३९।।

उस धनी व्यक्ति ने यह निश्चय कर रक्खा था कि मैं प्रति दिन किसी न किसी साधु महात्मा को नियत धन देकर (सेवा समर्पण कर) के ही दूसरा काम किया करूँगा। भाग्यवश उस दिन कोई सन्त न मिलने के कारण वह इस खोज में निकला हुआ नाग पहाड़ की ओर पहुँचा तो सम्पूर्ण भय हरण करने वाले श्रीपरशुराम-देवजी महाराज को देखकर बड़ा ही प्रसन्न हुआ और प्रणाम करके साथ में लाया हुआ सारा धन उनकी सेवा में समर्पण कर दिया।

हस्त्यश्वरथछत्रादीन् नरयानञ्च चामरौ।
वहुधनं समर्प्याऽथ नमस्कृत्य गृहं ययौ।।४०।।

हाथी, घोड़े, रथ, छत्र, पालकी और चमर आदि तथा

बहुत सा धन समर्पित कर और महाराजश्री को भक्ति पूर्वक प्रणाम करके वह व्यक्ति अपने घर को चला गया।

परीक्षकोऽपि तद्दृष्ट्वा महिमानं दुरत्ययम्।
आचार्यपादपद्मे हि ननाम शिरसा मुदा।।४१।।

वह परीक्षक भी जो अभी तक महाराजश्री के साथ ही था, इस तरह की अलौकिक महिमा देखकर अत्यन्त प्रसन्न होकर श्रीमहाराज के चरणों में गिर पड़ा।

(महाराजश्री के दिव्य तेज, तपोबल एवं परम महिमा को वह अभी तक नहीं जान पाया था। अब उसे ज्ञात होगया कि महाराजश्री स्वयं माया में लिप्त नहीं हैं, बल्कि माया ही उनके पीछे-पीछे स्वयं चला करती है, अतः उसने श्रीचरणों में गिरकर अपने अपराध की क्षमा माँगी)

एवमादीन्यनन्तानि चरित्राणि च भूतले।
सर्वलोकप्रसिद्धानि ज्ञानभक्तिकराणि च।।४२।।

इस प्रकार महाराजश्री के अनन्त (अनेक) चरित्र हैं, जो ज्ञान और भक्ति को बढाने वाले हैं, और वे लोक में सर्वत्र प्रसिद्ध है।

श्रीमद्व्यासपदारविन्दमधुपं श्रीपर्शुरामं तथा
गोपालं मदनादिकञ्चतमहं बाहुबलं बोहितम्।
वन्दे केशव-माधवोद्धव-हृषीकेशं स्वयंभ्वादयान्
सर्वान् ज्ञानविरागभक्तिनिकरान् श्रीलापरं चंडिकाम्।।

श्रीहरिव्यासदेवाचार्य चरण-चञ्चरीक श्रीपरशुरामदेवाचार्य श्रीगोपालदेवाचार्य, श्रीमदनगोपालदेवाचार्य, श्रीबाहुबलदेवाचार्य,

श्रीबोहितदेवाचार्य, श्रीकेशवदेवाचार्य, श्रीमाधवदेवाचार्य, श्रीउद्धव-देवाचार्य, श्रीहृषीकेशदेवाचार्य, श्रीस्वभूरामदेवाचार्य, श्रीलपरा-गोपालदेवाचार्य और श्रीमुकुन्ददेवाचार्य इन सभी आचार्यस्वरूपों को जो कि भक्ति और ज्ञान के प्रकाश करने वाले थे मैं सादर दण्डवत् करता हूँ। और इनके साथ ही साथ श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी महाराज की परम शिष्या श्रीहरिभक्ति परायण श्रीचण्डिका (श्रीदेवीजी) को भी प्रणाम करता हूँ जो वैष्णवी देवी के नाम से भारत के जम्बूक्षेत्र में प्रख्यात हुई।

आचार्यचारुचरितं रचितं मया वै
सर्वोपकारकरसं सततं सुसेव्यम्।
जिज्ञासुभिः परमभागवतैर्महद्भि-
र्निम्बार्कसन्ततिगतैर्निजसंप्रदायम् ।।४४ ।।

पाठान्तर--

श्रीहरिव्यासदेवानां द्वादशशिष्यसत्तमाः।
तत्सस्वभूरामदेवश्च वोहितदेव उत्तमः ।।१ ।।
श्रीमदनादिगोपालश्चोद्धवदेव शोभनः।
श्रीबाहुबलदेवो हि भगवद्भक्तितत्परः ।।२ ।।
परशुरामदेवश्च गोपालदेव ईडितः।
श्रीहृषीकेशदेवश्च माधवदेव उज्ज्वलः ।।३ ।।
केशवदेव ईशज्ञो गोपालदेव आश्रुतः।
श्रीमन्मुकुन्ददेवश्च सर्वे जयन्तु भूतले ।।४ ।।
इत्थञ्च वैष्णवी देवी चण्डिका शिष्यरूपिका।

सुविख्याताऽस्ति लोकेऽस्मिञ्जम्बूक्षेत्रे प्रपूजिता ।।५ ।।

भगवत्तत्त्व के जिज्ञासु परम वैष्णव एवं श्रीनिम्बार्क परम्परा में चले आने वाले महानुभावों को चाहिये कि सम्प्रदायानुरूप अत्यन्त सुन्दर सर्वोपकारक और भक्ति रस से युक्त मेरे द्वारा लिखा हुआ यह सुन्दर श्रीआचार्य चरित्र अवश्य सेवन करें।

मङ्गलं श्रीरमाकान्तः सच्चिदानन्दविग्रहः ।
मङ्गलं नियमानन्दो ज्ञानभक्तिप्रदो नृणाम् ।।४५ ।।

सत् चित् आनन्द स्वरूप श्रीरमाकान्त (श्रीराधासर्वेश्वर भगवान्) तथा श्रीनियमानन्द (श्रीनिम्बार्काचार्यजी मनुष्यों को मंगलमय भक्ति और ज्ञान के देने वाले हैं।

इत्याचार्यचरित्रस्य विश्रामोऽयंचतुर्दशः ।
यत्र संकीर्तितं श्रीमत्परर्शुरामगुणोदयम् ।।४६ ।।

इस प्रकार यह श्रीआचार्य चरित्र का चौदहवाँ विश्राम संपूर्ण हो रहा है, जिसमें कि श्रीपरशुरामदेवाचार्यजी महाराज के गुण और कीर्ति का वर्णन किया गया है।

इति श्रीमन्नारायणदेवाचार्यसंग्रहीतं श्रीमद्धंसनारायणादि--
परशुरामदेवाचार्यावधिसंक्षिप्तचरित्रं समाप्तम्। संवत् १९१७
मिति माह वदि ३ भौमवासरे लिखितं श्रीवृन्दावनमध्ये
यमुना तटे शुभस्थाने गोविन्दवागे हस्ताक्षर आशाराम
ब्राह्मणस्य पठनार्थी शुभमस्तु। श्रीब्रह्मचारी महाराज
श्रीराधागोपाल मन्दिरस्य वंशी-वटस्य निकटे।

।। शुभम् ।।